जलतरंग एक दुर्लभ वाद्य संरक्षण और चुनौतिया

शिवानी शुक्ला*

प्रचलन से दूर होते इस लुप्तप्राय प्राचीन दुर्लभ वाद्य जलतरंग वाद्य की वादन तकनीकी के संरक्षण से ही जलतरंग वादन परम्परा के संवर्धन और संरक्षण के उपाय का मार्ग आलोकित होता है।

संगीतवादन के क्षेत्र में प्राचीनतम वाद्यों में से एक तथा लुप्तप्रायः होने वाले वाद्य जलरंग (प्राचीन नाम उदक वाद्य) की वादन परम्परा को बचाने के गुरू निर्दिष्ट एवं स्वानुभव प्राप्त उपायों से वाद्य तथा वादन मूलक बाधाओं का निराकरण किया जा सकता है तथा इस प्राचीन दुर्लभ वाद्य तथा वादन को संरक्षण प्रोत्साहन व संवर्धन मिल सकता है

जलतरंग वादन का प्रयोग वाद्य वृन्द के अन्तर्गत होता रहा है। किन्तु भारतीय दृष्टि से यह दुःखद ही कहा जायेगा कि भारतीय वाद्य वृन्दों की भी संख्या नगण्य सी ही रही। उस्ताद अलाउद्दीन खाँ साहब, तिमिर वरन जी, विजय राघव राव, पण्डित रविशंकर आदि ने शास्त्रीय संगीत के वृन्द वादन में जलतरंग का प्रयोग किया है। बाबा अलाउद्दीन खाँ साहब अनेक वाद्यों के वादन में नैपुण्य रखते थे और जलरंग बजाने में भी समर्थ थे (किन्तु कालान्तर में सरोद वादन की प्रधानता के कारण जलरंग उनमें मंचीय आश्रय न पा सका) वादनगत दृष्टि से प्रत्येक वाद्य की जो अपनी मौलिक माँग होती है वह माँग जलतरंग वाद्य की प्रायः अनदेखी के कारण न पूरी हो सकी। यथा–संगीत के अन्तर्गत वाद्य अंग तथा गायकी अंग में से कलाकार प्रायः एक का अनुसरण करता है।

''किसी संगीत कलाकार की कला के प्रचार या प्रसार मे विभिन्न सांस्कृतिक संस्थाओं का योगदान भी रहता हैं। किसी भी कलाकार की कला को मूल्यवान एवं मूल्यहीन बनाने में विभिन्न सांस्कृतिक संस्थाओं तथा संगीत कला–समीक्षकों की भूमिका मुख्य होती हैं।

कई बार राजसत्ता की सांस्कृतिक नीति संगीत की दिषा तय करती हैं। पद, पुरस्कार, अनुदान के माध्यम से राजसत्ता संगीत की प्रक्रिया में दखल देती हैं। विभिन्न सरकारी संचार माध्यमों और संस्थाओं से संगीत का विकास प्रभावित होता है। आजकल संस्कृति के सरकारीकरण का व्यापक अभियान चल रहा हैं। यह सब समाजशास्त्रीय विवेचन का विषय होना चाहिये।''

''बारह घंटे से अधिक अनवरत जलतरंग वादन (1972) तथा बारह घंटे से भी अधिक अनवरत शास्त्रीय गायन (1973) के द्वारा दो विश्वकीर्तिमानों की स्थापना करने वाले' डॉ0 राजेश्वर आचार्य 'प्रभावरंग' भी जलतरंग वादन के लुप्त होते चलन पर चिन्ता व्यक्त करते हैं। 'प्रभावरंग' के अनुसार जलतरंग का मंचीय आश्रय न पा सकनाकला के व्यावसायिक और व्यावहारिक उपयोग में अन्तर का परिणाम रहा है। कला का सदुपयोग ललित पक्ष है ओर दुरुपयोग व्यावसायिक और उपयोग व्यावहारिक यहाँ पर आकर व्यावसायिक और व्यावहारिक में भी अन्तर करना आवश्यक हो जाता है। कुछ शब्दों के संयुक्त प्रयोग प्रायः चलते रहते हैं। किन्तु ध्यान दिया जाये तो विचित्र विरोधाभास ध्वनित होगा जैसे उपभोक्ता संस्कृति हिप्पी संस्कृति, संस्कृति का अर्थ रहन सहन जीवन पद्धति के अभिप्राय जितना ही संकुचित नहीं है। वैसे ही मात्र हिप्पी (स्वच्छन्द स्वेच्छाचारी) या उपभोक्ता होना सम्यकता की औचित्य की कृति निरन्तर परिश्कार परिमार्जनमय प्रभावशील परिणामिक संस्कार स्थिति–संस्कृति नहीं कहा जा सकता इसी प्रकार जीवन की जीवन्तता का आधार तत्व ललित कला हर गतिविधि के व्यवहार में अपने को साकार किये हुए है तो यह कैसे कहा जा सकता है कि ललित कला का कोई अव्यावहारिक या काल्पनिक अस्तित्व ही होता है हाँ, इतना कहा जा सकता है कि योग, प्रयोग, उपयोग, सहयोग, के स्थान पर क्षुद्र नश्वर लोभ संयोग के उद्योग के लिए अधुना उद्योग जिस अधम उधम मे लगा है उसमें कच्चा माल, निर्मित वस्तु निर्माता थोक क्रेता विक्रेता फुटकर विक्रेता की लंबी सीढ़ियों को चढ़कर बाजार बनता है परिवार और बाजार के बीच की दूरी ही ललित कला का अन्तर वारांगना ओर नेहांगना का अन्तर बन जाता है। परिवार और बाजार के बीच की दूरी ही ललित कला और व्यावसायिक कला के बीच का अन्तर कहा जा सकता है अन्यथा यदि सृष्टि है तो प्रलय भी ललितात्मक कला लय के शाश्वत निलय से निरपेक्ष नहीं। सृष्टि के कण–कण क्षण–क्षण में ललित कला के शाश्वत प्रण नश्वरता से रण करते हुए देखे जा सकते हैं चेतना का आनंद विहार सौन्दर्याकार ही ललितकला के आकार का आचार व्यवहार है। अतः ललितकला का व्यावहारिक होना प्रयोग एवं सहज प्रकृति धर्मी होना कहा जायेगा दुर्व्यवहारिक होना आज का व्यावसायिक होना कहा जा सकता है। अस्तु ललितकला एवं व्यावहारिक या व्यवसायिक कला की स्थूल विभाजक सीमा के लिए निम्न तथ्य विचारणीय हैं। व्यावहारिक कलाकार की अर्हताएं–क्या उसमें ललित कलाकार की रचनात्मकता अपेक्षित है या नहीं? इसी क्रम में यह विचारणीय हो जाता है कि व्यावसायिक कलाकार में से कलाकार शब्द के विशेषण को धारण करने वाले व्यक्ति को रचना के क्षेत्र में क्या ललित कलाकार की क्षमता से कम होने पर भी क्या कलाकार कहा

जा सकता है? रेखा संयोजन संतुलन आदि रचना विधान में निपुण हुए बिना क्या किसी पदार्थ या तत्व के गुण संवर्धन में योगदान करने में ऐसा व्यक्ति सक्षम हो सकता है यदि नही ंतो वह कलाकार कैसा और कैसे? उसका बुद्धिपरक तथा क्रिया परक कौशल बिना समर्थ रचनाधर्मी हुए कैसे कलाकार नामामिधान पा सकता है।क्या कहीं का तिनका कहीं का रोड़ा भानुमति ने कुनबा जोड़ा का तात्पर्य व्यावसायिक कलाकार में निहित समझा जा सकता हे? कभी नहीं। व्यावहारिक कलाकार में भी वहीं सारी सामर्थ्य अपेक्षित होती है जो ललित कलाकार में मानी जाती है अन्यथा पाखण्ड खण्ड–खण्ड होता ही है। इस दृष्टि से तो कला और कलाकार के स्थान पर उसके प्रयोग पर अहं विज्ञापन के हस्ताक्षर उद्योग आदि दूर उपयोग पर विचार करणीय है जलतरंग (प्राचीन नाम उदक वाद्य) वादन के दृष्टिकोण से देखा जाय तो बाज अंग में गतकारी आधार बनती हैं और गायकी अंग में आलाप आदि सहित गायन की वंदिशें और इसके विस्तार में न जाकर यह मुख्यतया उल्लेख्य है कि जलतंरग में गतकारी का प्रयास प्रायः इस लिए असफल होता रहा है क्योंकि गतकारी के अन्तर्गत (बिलम्बित गत) मसीतखानी और द्रुतगत रजाखानी बजाना प्रचलन में रहा है और इसी कारण से प्रायः जलतरंग वादन में भी यही क्रम अपनाने की विवशता हो जाती है और जब जलतरंग में सितारखानी या तंत्रवादकीय गत का अनुसरण किया जाता है। तो विलम्बित मात्राओं के बीच का अन्तराल स्वर की निरन्तरता के अभाव में स्तर छन्दमय भराव नहीं दे पाता।''

यह वाद्य अपने आप में एक अनुठा वाद्य होते हुए भी अपेक्षित प्रसार अब तक नहीं पा सका ं जो कि विश्लेषण का विषय हैं। इसी संदर्भ में प्रस्तुत हैं। संगीत गुरूश्रेष्ठ नादर्षि पद्मश्री पं0 बलवंत राय भट्ट 'भावरंग' जी द्वारा साक्षात्कार के माध्यम से उद्घाटित अपने जलतरंग वादन के अद्भुत प्रभाव संबंधी अनुभव। भावरंग जी कहते हैं कि–

सन् 1935 के आसपास मुम्बई (तब बम्बई) में तत्कालीन दष्टिबाधित विद्यालय के प्रबन्धक ने प्राणीउद्यान के परिसर में मेरा जलतरंग वादन का कार्यक्रम आयोजित किया था। जिस स्थान पर मैने जलतरंग वादन प्रस्तुत किया उसी से कुछ दूरी पर बाघ अपने पिंजरे में दहाड़ रहा था, परन्तु जलतरंग की स्वरलहरियों को सुनते ही बाघ पूर्णतया शान्त हो गया एवं पूरे वादन के कार्यक्रम की अवधि में शान्त मुद्रा में ही रहा। इसे मैं (जलतरंग वाद्य या) संगीत का प्रत्यक्ष प्रभाव निश्चित रूप से मानता हूॅ। '' भावरंग''जी का यह संस्मरण जलतरंग के चमत्कारिक प्रभाव का प्रमाण हैं। शास्त्रों में वर्णित हैं–

वनेचरस्तृणाहारश्चित्रं मृगषिषुः पशुः ।। लुब्धो लुब्धकसंगीते गीते यच्छति जीवितम्।।

जलतरंग तन्त्र तथा ताल वाद्य का संयुक्त रूप अर्थात सप्त स्वरमय ताल वाद्य है अतः इसमें ताल प्रधान कार्य स्वयं स्वरात्मक स्वरूप उपस्थित कर देते हैं।' जलतरंग वादन के क्षेत्र में उत्तर भारत के श्री के0 एल0 सूद साहब एक प्रख्यात कलाकार रहें हैं और दिल्ली के श्री घासीराम जी भी इस क्षेत्र के विख्यात कलाकार रहें हैं। विविध वाद्य वादन निष्णात तथा विचित्र वीणा वादन में प्रख्यात स्व0 डॉ0 लालमणि मिश्र जी जलतरंग बजाते थे किन्तु बाद में उपर्युक्त बाधाओं के कारण ही उन्होंने जलतरंग को कार्यक्रम न जमा पाने वाला वाद्य कहते हुए बजाना छोड़ दिया। जलतरंग वादन के क्षेत्र में यह बड़ा निराशापूर्ण व खेदजनक तथ्य है कि विगत पचास वर्षों से इस एक अरब वाली जनसंख्या वाले देश में पचास जलतरंग वादकों की भी गणना किया जाना कठिन है।

नेट परीक्षा हेतु प्रकाशित पुस्तिका में जलतरंग वादकों के कुल छः नाम मुश्किल से मिलते हैं ले–देकर इस समय छः कलाकार के अतिरिक्त अन्य किसी भी कलाकार द्वारा कम से कम उत्तर प्रदेश में विगत पचीस वर्षों से जलतरंग वादन नहीं किया जा रहा है इस दृष्टि से सामान्यतया प्रति दस करोड़ में एक जलतरंग वादक का अनुपात भी प्राप्त नहीं है।

1972 में वाराणसी के नागरी नाटक मण्डली मंच पर प्रातः 6 बजे से सायं 6:30 तक बिना रूके लगातार डॉ0 राजेश्वर आचार्य 'प्रभावरंग' जी के जलतरंग वादन से लय–चक्रवर्ती पं0 किशन महराज सराहना के बाद हँसकर बोले कि जलतरंग के सफल कार्यक्रम किये जा सकते हैं यदि वाद्य की प्रकृति के अनुकूल वादन किया जाय।

अप्रचलन के कारण चीनी मिट्टी के उचित जलतरंग के प्याले अब ऐसे नहीं बन पा रहे हैं, जो उपयुक्त हों। जबकि जलतरंग के प्यालों को अति उच्च ताप पर पकाये जाने से स्वरात्मक गुणवत्ता प्राप्त की जा सकती है।

आज वाद्य और वादक सभी समाप्ति की ओर हैं अतः जलतरंग वाद्य वादन एवं वादकों के लिए करणीय उपाय कर लुप्तप्राय जलतरंग वादन के अप्रचलन का निवारण किया जा सकता है ।

संदर्भ ग्रंथ सूची–

1. संगीत का समाजशास्त्र, सत्यवती शर्मा, पृष्ठ सं0 31
2. शोध प्रबन्ध–पूर्वी उत्तर प्रदेश के प्रमुख सांगितिक रचनाकार तथा उनके व्यक्तित्व एवं विशिष्टताओं का विश्लेषण,, नीरज नयन पाठक, पृष्ठ सं0 214
3. डॉ0 राजेश्वर आचार्य 'प्रभावरंग' जी के साक्षात्कार पर आधारित
4. संगीत के प्रभावकारी पक्षों की तात्विक प्रक्रिया का विशलेषणात्मक अध्ययन, शोध प्रबन्ध,पृष्ठ सं052
5. (संगीत रत्नाकर 1.1, 26–30)गीत–वाद्य शास्त्र संग्रह संकलन मुकुन्द लाठ पृष्ठ सं0 16